सैयद वंश

अ०प्रो० डॉ० संदीप कुमार
इतिहास विभाग
बी०एम० कॉलेज, रहिका, मधुबनी

दिल्ली सल्तनत के इतिहास में तुगलक वंश के पराभाव पर सैयद वंश का आगमन हुआ। सैयद वंश का शासनकाल केवल 37 वर्ष का रहा था। उसके समय में न तो खलजी-वंश के शासकों की भाँति साम्राज्य-विस्तार की साहसिक नीति अपनायी गई और न ही तुगलक वंश के शासकों की भाँति प्रशासकीय सुधारों का प्रयत्न किया गया। देखा जाय तो सैयद शासकों का राजनीतिक दृष्टिकोण दिल्ली के दो सौ मील के घेरे तक ही सीमित रहा। सैय्यद वंश के इतिहास में भी कई शासक हुए जिन्होंने अपने शासनकाल को इतिहास में सकारात्मक या नकारात्मक रूप में दर्ज किया।

खिज्रखाँ (1414-1421ई०) — खिज्रखाँ सैयद-राजवंश का संस्थापक था। उनके पिता मलिक सुलेमान को मुल्तान के सूबेदार मलिक मर्दान दौलत ने अपने पुत्र के समान माना था। बाद में सुल्तान फीरोजशाह तुगलक ने खिज्र खाँ को मुल्तान का सूबेदार नियुक्त किया था। तैमूर के आक्रमण के समय खिज्रखाँ भी तैमूर के साथ भारत आया जिससे प्रसन्न होकर तैमूर ने भारत छोड़ने से पहले उसे मुल्तान लाहौर और दिपालपुर की सूबेदारी प्रदान की। अन्त में, 1414 ई० में उसने दौलत खाँ लोदी से दिल्ली को छीन लिया और दिल्ली का पहला सैयद सुल्तान बना। परन्तु खिज्रखाँ ने 'सुल्तान' की उपाधि ग्रहण नहीं की अपितु रैयत-ए-आला की उपाधि से ही संतुष्ट रहा। वह तैमूर के पुत्र शाहरुख को निरन्तर भेंट और राजस्व भेजता रहता था और इस प्रकार एक प्रकार से वह अपने को उसके अधीन मानता था यद्यपि व्यावहारिक दृष्टि से ऐसी कोई बात नहीं थी। उसने कई वर्षों तक खुतबा भी शाह-रुख के नाम से ही पढ़वाया। उसने अपने सिक्कों पर तुगलक शासकों के ही नाम रहने दिये। सम्भवतया, इसका कारण सोने-चाँदी की कमी थी। परन्तु उसका मूल उद्देश्य तुर्क एवं अफगान सरदारों को सन्तुष्ट रखना और अपनी प्रजा की सहानुभूति प्राप्त करना था।

खिज्रखाँ का दिल्ली पर अधिकार हो जाने से पंजाब, मुल्तान और सिन्ध दिल्ली-सल्तनत में सम्मिलित हो गये थे। परन्तु इसके अतिरिक्त दिल्ली-साम्राज्य दोआब और मेवात के कुछ प्रदेशों तक ही सीमित रह गया था। खिज्रखाँ ने इन सीमाओं को विस्तृत करने का कोई प्रयत्न नहीं किया बल्कि उसने इक्ताओं (सूबों) को शिकों (जिला का रूप) में बाँटकर स्थानीय वफादारों को जगह देने का प्रयास किया। खिज्रखाँ का मुख्य कार्य दिल्ली के निकट के उपजाऊ क्षेत्र को अपने अधीन करने और प्रत्येक वर्ष सैनिक बल द्वारा अपने जागीरदारों से राजस्व वसूल करने तक ही सीमित रहा। खिज्रखाँ ने तुर्की अमीरों को सन्तुष्ट करने की नीति अपनायी और उन्हें उनकी जागीरों से वंचित नहीं किया। परन्तु वे संतुष्ट नहीं हुए और उस सुविधा का उपयोग उन्होंने निरन्तर विरोध और विद्रोह करने के लिए किया। खिज्रखाँ के सम्पूर्ण समय में यह स्थिति रही कि प्रत्येक वर्ष उसे या उसके सरदारों को राजस्व वसूल करने के लिए सैनिक-अभियानों पर जाना पड़ता था। विभिन्न जागीरदार या तो विरोध नहीं करने की स्थिति में होने के कारण राजस्व दे दिया करते थे अथवा अपने किले में बंद हो जाते थे और पराजित होने के पश्चात् ही राजस्व देते थे। इस कार्य में उसके मंत्री ताज-उल-मुल्क ने सुल्तान की काफी सहायता की थी। परन्तु खिज्रखाँ उस विद्रोही प्रवृत्ति और उन विद्रोही जागीरदारों को स्थायी रूप से समाप्त करने में असफल हुआ और जीवनपर्यन्त इन सैनिक सैनिक अभियानों में लगा रहा। उसने कटेहर,

P.T.O.

मुहम्मदशाह (1434-1445 ई०) — मुबारकशाह के पश्चात् उसके भाई का पुत्र मुहम्मद-बिन-फरीदखाँ मुहम्मदशाह के नाम से गद्दी पर बैठा। वह अयोग्य और विलासी सिद्ध हुआ। उसने अपनी ~~अयोग्यता~~ अयोग्यता से ~~सैय्य~~ सैयद वंश के पतन का मार्ग प्रशस्त किया। आरम्भ के छः माह तक वजीर सरवर-उल-मुल्क का शासन पर पूर्ण प्रभाव रहा। परन्तु नायब सेनापति कमाल-उल-मुल्क सैयद वंश के प्रति वफादार रहा और उसने वजीर को समाप्त करने के लिये सरदारों का एक पृथक गुट बना लिया और धोखे से षड्यंत्र द्वारा सरवर-उल-मुल्क की हत्या कर दी अब मुहम्मद शाह वजीर के प्रभाव से मुक्त हो गया परन्तु स्वयं भी शासन की देखभाल न कर सका। नया वजीर कमाल-उल-मुल्क भी अधिक योग्य नहीं था। इसके परिणामस्वरूप विद्रोहियों और बाह्य आक्रमणकारियों को अवसर मिला। मालवा के शासक महमूद ने दिल्ली पर आक्रमण किया। मुहम्मदशाह ने अपनी सहायता के लिये मुल्तान के सूबेदार बहलोल को आमंत्रित किया। दिल्ली से दस मील दूर तलपत नामक स्थान पर युद्ध हुआ परन्तु निर्णय न हो सका। मुहम्मदशाह ने बहलोल का सम्मान किया, उसे अपना पुत्र कहकर पुकारा और 'खान-ए-खाना' की उपाधि से विभूषित किया। पंजाब के अधिकांश भाग पर बहलोल का स्वामित्व भी स्वीकार कर लिया गया। इससे लालायित होकर बहलोल ने स्वयं 1443 ई० में दिल्ली पर आक्रमण किया परन्तु विफल रहा।

अपने अंतिम समय में मुहम्मदशाह न तो आन्तरिक विद्रोह को दबा सका और न ही अपने राज्य की सीमाओं की सुरक्षा कर सका। जौनपुर के शासक ने पूर्व में उससे कुछ परगने छीन लिये, मुल्तान स्वतन्त्र हो गया, इक्तादारों ने राजस्व देना बन्द कर दिया और दिल्ली के बीस मील के दायरे में रहने वाले अमीर भी स्वतन्त्र प्रवृत्ति का परिचय देने लगे। इस प्रकार मुहम्मदशाह असफल सिद्ध हुआ और उसके समय से सैयद वंश का पतन आरम्भ हो गया। 1445 ई० में उसकी मृत्यु हो गयी।

अलाउद्दीन आलमशाह (1445-1450 ई०) — मुहम्मदशाह की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र अलाउद्दीन 'अलाउद्दीन आलमशाह' के नाम से सिंहासन पर बैठा। वह सैय्यद शासकों में सबसे अधिक अयोग्य सिद्ध हुआ। अपने प्रभाव को बढ़ाने में असफल होने तथा अपने वजीर हमीदखाँ से झगड़ने के कारण वह बदायूँ चला गया तथा वहीं रहने लगा। 1447 ई० में बहलोल ने दिल्ली पर आक्रमण किया किन्तु वह असफल रहा। अन्त में हमीदखाँ ने बहलोल और नागौर के सूबेदार कियामखाँ को दिल्ली आमन्त्रित किया। बहलोल दिल्ली गया किन्तु कियामखाँ नहीं गया। कुछ समय पश्चात् बहलोल ने धोखे से हमीदखाँ को मरवा दिया और 1450 ई० में सम्पूर्ण शासन अपने हाथ में ले लिया। फिर उसने सुल्तान अलाउद्दीन आलमशाह को दिल्ली आने का निमंत्रण दिया परन्तु अलाउद्दीन ने अपनी दुर्बल स्थिति को देखकर बदायूँ में रहना ही ठीक समझा। बहलोल ने भी अलाउद्दीन को बदायूँ से अपदस्थ करने का प्रयत्न नहीं किया और अलाउद्दीन आलमशाह अपने मृत्युपर्यन्त तक बदायूँ पर ही शासन करता रहा। इसके पश्चात् उसके दामाद और जौनपुर के शासक हुसैनशाह शर्की ने बदायूँ को अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। इस प्रकार 37 वर्ष के शासनकाल के पश्चात् सैयद वंश समाप्त हो गया।

इटावा, खोर, जलेसर, ग्वालियर, बयाना, मेवात, बदायूँ आदि स्थानों पर आक्रमण किया अपने अन्तिम समय में वह मेवात पर आक्रमण करने के लिये गया और उसने कोटला के किले को बर्बाद कर दिया। उसके पश्चात् उसने ग्वालियर के कुछ क्षेत्रों को लूटा और फिर इटावा गया जहाँ के नवीन राजा ने उसके आधिपत्य को स्वीकार कर लिया। वहाँ से वापस आते हुए वह बीमार हो गया और मई, 1421 ई० को दिल्ली पहुँचकर उसकी मृत्यु हो गयी।

खिज्र खाँ बुद्धिमान, उदार और न्यायप्रिय शासक था। उसका व्यक्तिगत चरित्र अच्छा था। फरिश्ता के अनुसार "उसके शासन में जनता प्रसन्न और संतुष्ट थी और इस कारण युवा और वृद्ध, दास और स्वतन्त्र, सभी ने उसकी मृत्यु पर काले वस्त्र पहनकर दुख प्रकट किया।"

मुबारकशाह (1421-1434 ई०) — खिज्र खाँ ने अपने पुत्र मुबारकखाँ को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था और वह मुबारकशाह के नाम से सिंहासन पर बैठा। उसने 'शाह' की उपाधि धारण की, अपने नाम से खुतबा पढ़वाया और अपने नाम के सिक्के चलवाये। गद्दी पर बैठने के पश्चात् मुबारकशाह को तीन मुख्य शत्रुओं से खतरा था। उत्तर-पश्चिम में खोक्खर नेता जसरथ, दक्षिण में मालवा का शासक और पूर्व में जौनपुर का शासक उसके मुख्य प्रतिद्वन्द्वी थे। इनमें से प्रत्येक की महत्वाकांक्षा दिल्ली को जीतने की थी। परन्तु मुबारक अपने राज्य की सीमाओं की सुरक्षा करने में समर्थ रहा यद्यपि वह राज्य-विस्तार न कर सका। मुबारकशाह को काबुल के नायब-सूबेदार शेख अली के आक्रमणों का भी मुकाबला करना पड़ा। शेख अली ने सरहिन्द, अमरोहा और तबरहिन्द के विद्रोही सूबेदार पुलाद की सहायता की और जसरथ (खोक्खर) के उपद्रवों से भी लाभ उठाना चाहा। परन्तु वह कई विजयों के बावजूद मुबारकशाह की सीमाओं के अन्तर्गत किसी भी सीमाओं के अन्तर्गत किसी भी प्रदेश को अपने आधिपत्य में न कर सका। इसके अतिरिक्त मुबारकशाह को राजस्व वसूल करने के लिये अपने जागीरदारों और सरदारों के विरुद्ध मुख्यतया बदायूँ, इटावा, कटेहर, ग्वालियर आदि पर आक्रमण करने पड़े।

मुबारकशाह ने अपने एक वजीर सरवर-उल-मुल्क के दमन की नीति से असंतुष्ट होकर उसके राजस्व वसूल करने के अधिकार को छीनकर नायब सेनापति कमाल-उल-मुल्क को सौंप दिया था जो उसकी मृत्यु का कारण बना। मुबारकशाह ने सरवर-उल-मुल्क को दिल्ली का कोतवाल नियुक्त किया था। इससे असन्तुष्ट सरवर-उल-मुल्क ने कुछ हिन्दुओं की सहायता प्राप्त की (वास्तव में सरवर-उल-मुल्क प्रारम्भ में मलिक सरूप नाम का हिन्दू था जो बाद में मुसलमान बनाया) और फरवरी, 1434 ई० को धोखे से मुबारकशाह की हत्या कर दी।

मुबारकशाह के शासनकाल की उपलब्धियों में विजय अभियानों के अतिरिक्त यह भी है कि उसने यमुना नदी के तट पर एक नवीन नगर मुबारकबाद बसाया था। उसने वहाँ एक मस्जिद भी बनवाई थी। उसने तत्कालीन विद्वान याहिया सरहिन्दी को राजकीय संरक्षण प्रदान किया था जिसने उसके समय के इतिहास को तारीख-ए-मुबारकशाही के नाम से लिखा था।